8

जिया कब तक

जिया कब तक उलझेगा, संसार विकल्पों में।
कितने भव बीत चुके, संकल्प विकल्पों में ।।टेक।।

उड–उड कर यह चेतन, गति गति में जाता है।
रागों में लिप्त सदा, भव भव दुःख पाता है।।
क्षण भर को भी न कभी, निज आतम ध्याता है।
निज तो न सुहाता है, पर ही मन भाता है।
यह जीवन बीत रहा, झुठे संकल्पों में।। जिया–१।।

निज आत्मस्वरूप लखो, तत्वों का कर निर्णय।
मिथ्यात्व छूट जावे, समकित प्रगटे सुखमय।।
निज परणति रमण करे, हो निश्चय रत्नत्रय।
निर्वाण मिले निश्चय, छूटे भवदुःख भयमय।।
सुख ज्ञान अनन्त मिले, चिन्मय की गल्पों में।। जिया–२।।

शुभ अशुभ विभाव तजो, हैं हेय अरे आस्रव।
संवर का साधन ले, चेतन का कर अनुभव।।
शुद्धातम का चिंतन, आनन्द अतुल अभिनव।
कर्मों की पगध्वनि का, मिट जावेगा कलरव।।
तू सिद्ध स्वयं होगा, पुरुषार्थ स्वकल्पों में।। जिया–३।।

हे मन! तुम कब तक इस असार संसार के विकल्पों में उलझोगे। जिन संकल्प और विकल्पों के जाल में उलझकर तुमने अनन्त भव व्यर्थ बिता दिये ।

हे मन! मिथ्या मान्यता के कारण यह जीव चारों गतियों में भ्रमण करता रहता है और राग के स्वरूप को अपना मानकर हर पर्याय में दु:ख भोगता है। एक क्षण के लिये भी अपने आत्मा का ध्यान नहीं करता, इस जीव को निज आत्मस्वरूप तो पंसद नहीं आता और पर पदार्थ की रमणता ही सुहाती है। इस तरह यह संपूर्ण जीवन इन बाहर के झूठे पुरूषार्थ में ही व्यतीत होता जाता है।

हे चेतन! अब सम्यक् तत्त्वों का निर्णय कर अपने आत्मा के स्वरूप को देखो जिससे मिथ्यात्व का अभाव हो जायेगा और सुख स्वरूपी सम्यकदर्शन प्रगट होगा तथा इसी सम्यग्दर्शन के द्वारा अंतर परिणति में सम्यकज्ञान व सम्यकचारित्र रूपी रत्नत्रय की प्राप्ति होगी। जिससे नियम से समस्त दुखों से छुटकारा रूपी मोक्ष की प्राप्ति होगी।

हे जीवराज! अब शुभ और अशुभ विभावी भावों का त्याग करो, क्योंकि ये सभी आस्रव होने से छोड़ने योग्य हैं। तुमतो संवर को साधन बनाकर अपने चेतन तत्त्व का अनुभव करो। तुम अनुपम और नित नवीन आनंद देने वाले इस शुद्धात्मा का चिन्तन करो, जिससे कर्मबन्धन की श्रृंखला का अभाव होगा और तुम स्वयं अपने ही पुरूषार्थ से अल्प समय में सिद्ध दशा की प्राप्ति करोगे।

जिया कब तक

नर रे नर रे नर रे, तू चेत अरे नर रे।
क्यों मूढ़ विमूढ़ बना, कैसा पागल खर रे।।
अन्तर्मुख हो जा तू, निज में निज रस भर रे।
पर अवलंबन तज रे, निज का आश्रय कर रे।।
पर परिणति विमुख हुआ, तो सुख पल अल्पों में।।जिया–४।।

तू कौन कहां का है, अरु क्या है नाम अरे।
आया है किस घर से, जाना किस गाँव अरे।।
सोचा न कभी तुने, दो क्षण की छांव अरे।
यह तन तो पुद्गल है, दो दिन की ठांव अरे।।
तू चेतन द्रव्य सबल, ले सुख अविकल्पों में।।जिया–५।।

यदि अवसर चूका तो, भव–भव पछतायेगा।
फिर काल अनन्त अरे, दुःख का घन छायेगा।।
यह नरभव कठिन महा, किस गति में जायेगा।
नरभव भी पाया तो, जिनश्रुत नहिं पायेगा।।
अनगिनत जन्मों में, अनगिनत कल्पों में।।जिया–६।।

हे मनुष्य! सुन.. सुन.. तू अभी भी जाग जा, सचेत हो जा तू क्यों पागल पशु की तरह मूर्ख बना हुआ है। अब तू अर्न्तमुख हो जा और अपने ज्ञान की पर्याय में आत्म स्वभाव की महिमा को ला, पराधीनता को छोड़कर अपने स्वरूप का आश्रय कर। यदि पर तरफ की दृष्टि छोड़ देगा तो कुछ ही समय में तुझे अतीन्द्रिय सुख की प्राप्त होगी।

हे चेतन! तू कौन है, तेरा क्या स्वरूप है और तेरा वास्तविक नाम क्या है, कहाँ से तू आया है और कहाँ तुझे जाना है? क्या कभी कुछ समय निकालकर तूने इन सब बातों पर विचार किया है कि यह शरीर तो जड़ पुद्गल का बना हुआ है और कुछ समय मात्र के लिये ही इसका संग तुझे प्राप्त हुआ है। तुम तो स्वयं अतुल बल के धनी चेतन द्रव्य हो इसलिये जड़ पदार्थों को छोड़कर निर्विकल्प सुख को शीघ्र प्राप्त करो।

हे जीव! यदि अब भी यह मनुष्य पर्याय का दुर्लभ अवसर चला गया तो तुझे न जाने कितने भवों तक पछताना पड़ेगा और फिर अनन्त काल तक भयंकर दुःखों को भोगना पड़ेगा। यदि इस दुर्लभता से प्राप्त मनुष्य पर्याय का सदुपयोग नहीं किया तो पता नहीं तुझे कौनसी गति प्राप्त होगी और यदि पुण्योदय से मनुष्य पर्याय प्राप्त भी हो गई तो जिनकुल और जिनवाणी प्राप्त नहीं होगी और फिर से अनन्त जन्मों और अनंत कालों तक तुझे इस संसार में भटकना पड़ेगा।